IMPACT FACTOR 5.397 (SJIF USA)

बिहार शोध समागम
BIHAR SHODH SAMAAGAM

Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 4, October-December, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
https://doi.org/10.5281/zenodo.20596296

ISSN : 3048-6971 (ONLINE)

रामकुमार की कहानी 'चेरी के पेड़' : हर नारी की जीवन-दास्तान

सुदेश्ना दीक्षित
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग
रेवेंशॉ विश्वविद्यालय
कटक, पिन- 753003, ओडिशा

हिंदी कहानी जगत के साठ के दशक में एक प्रसिद्ध कथाकार के रूप में 'रामकुमार' जाने जाते हैं। वे एक प्रसिद्ध चित्रकार होने के साथ-साथ एक प्रसिद्ध कथाकार भी थे। इस महान कथाकार का जन्म 23 सितंबर 1924 ई० को हिमाचल की राजधानी शिमला में हुआ था। मध्यमवर्गीय परिवार से ताल्लुक रखने वाले रामकुमार के कुल सात भाई-बहन थे। हिंदी साहित्य जगत के सुप्रसिद्ध रचनाकार 'निर्मल वर्मा' उनके छोटे भाई थे। पेशे से वे एक चित्रकार थे, जो एम. एफ. हुसैन जैसे महान चित्रकार के साथी थे। उनकी चित्रकला ने भारत ही नहीं, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय कला जगत में भी प्रसिद्धि प्राप्त की है। उनकी मृत्यु 14 अप्रैल 2018 ई. को 93 साल में हुई थी।

रामकुमार पहले एक चित्रकार हैं, बाद में एक कथाकार हैं। उनकी चित्रकला की तरह उनकी रचनाओं में भी हमें मध्यमवर्गीय जीवन की विडंबनाओं की प्रमुखता दिखाई देती है। उनके चित्रों में मानवीय संवेदना का चित्र दिखाई देता है, जिसकी वजह से वे 'मनुष्य की सभ्यता के चित्रकार' के रूप में जाने जाते हैं। उनकी साहित्य रचना की बात करें तो 'हुस्ना बीबी तथा अन्य कहानियाँ', 'एक चेहरा', 'समुद्र', 'एक लम्बा रास्ता एवं दीमक' आदि प्रमुख कहानी संग्रह हैं। उन्होंने दो उपन्यास लिखे हैं, जो इस प्रकार हैं – 'घर बने घर टूटे' एवं 'देर-सवेर' आदि। रामकुमार की कहानियों के बारे में 'श्रीपत राय' कहते हैं -"रामकुमार की कहानियों को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। वे अपने पैरों पर खड़ी ही नहीं हो सकतीं वरन्, उन्नतभाल, हिंदी कथा-साहित्य के प्रांगण में निर्भय होकर विचरण कर सकती हैं। उनमें वे सभी गुण हैं जो उनको उच्च कोटि की कहानी की श्रेणी में पहुँचा देते हैं। उनमें एक गहरी अनुभूति है, मानव-मन के अंतरतम संघर्षों को उद्घाटित करने की अपार क्षमता है। उनमें संयम है, निर्मम संयम - कहीं भी एक शब्द भावुकता का नहीं है।"[1]

रामकुमार निम्न-मध्यवर्ग के कहानीकार हैं। निम्न-मध्यवर्गीय जीवन का जैसा चित्रण श्रीपत राय ने अपनी रचनाओं में किया है, वैसा ही चित्रण हमें रामकुमार की कहानियों में भी दिखाई देता है। रामकुमार का अपनी कहानी के बारे में स्वयं कहना है कि - "संभवतः एक उपन्यास में लेखक मुक्ति पा लेता हो, लेकिन एक कहानीकार के लिए ऐसा संभव नहीं हो पाता। कहानी खत्म हो जाने के बाद भी खत्म नहीं होती और आने वाली रचनाओं में उसकी परछाइयाँ दिखाई देती रहती हैं।"[2]

'चेरी के पेड़' कहानी की बात करें तो यह 'रामकुमार' के कहानी संग्रह 'एक चेहरा' में संकलित है। इसका प्रकाशन १९६२ (1962) ई. में हुआ था। इस कहानी में कथावाचक के बचपन की अनमोल स्मृतियों का जिक्र है। यह कहानी भी लेखक के चित्रों की तरह ही है जो धीरे से मन को आघात करके अंदर तक धंस जाती है। इस कहानी में जिस 'चेरी के पेड़' का ज़िक्र किया गया है, वह एक ऐसा पेड़ है जो लेखक के अहाते में उगा है। परंतु वे पेड़ उनके नहीं थे और न ही उस पेड़ पर लगे 'चेरी' के फलों को चुनने का हक इन बच्चों को था। दरअसल उनके पिता ने मकान किराये पर लिया था, परंतु वह पेड़ मकान-मालिक का था। बच्चों को इस बात की जानकारी नहीं थी। वे पेड़ उन बच्चों के लिए बहुत ही खास बन गए थे, परंतु बच्चों के माता-पिता एवं बड़ी बहन को सच्चाई का पता था कि अपने ही अहाते की मिट्टी में पले-बढ़े पेड़ पर उनका कोई हक नहीं था और न ही उसके फलों पर इन लोगों का कोई हक था। जिसके बारे में कहानी में बताया गया है -

"हम तो समझ रहे थे कि ये हमारे पेड़ हैं, हमारे बाग के अंदर हैं, कोई दूसरा उन्हें कैसे खरीद सकता है ? मैं बोला ।

पिता हँसते हुए बोले, "हमने मकान किराए पर लिया है। पेड़ों पर मकान-मालिक का ही हक रहता है।"

"अब हम चेरी नहीं तोड़ सकते हैं ?"

"चेरी ठेकेदार की हैं, हम कैसे तोड़ सकते हैं ?"[3]

उसे पता था कि एक दिन कोई आएगा और सारे फलों को तोड़ कर अपने साथ ले जाएगा।

ऐसा लगता है कि उस 'चेरी के पेड़' का मानवीकरण किया गया है। यह बात सिर्फ लेखक के परिवार को ही मालूम नहीं थी, बल्कि यह सच्चाई स्वयं उस 'चेरी के पेड़' को भी मालूम होगी ! हाँ, वह जानती थी कि अपने भीतर समाहित खाद-पानी सींचकर बड़े जतन से जो फल उगाए गए हैं, उन पर तो स्वयं उस पेड़ का भी कोई हक नहीं था। अगर होता, तो वह अपनी इच्छानुसार अपने फलों को अपने पास संजोकर रखती या वह तय करती कि उसके फलों को कौन खाएगा और किसे खिलाया जाएगा। परंतु वह लाचार है, वह अपने मन की मालिक नहीं है।

लेखक क्या यहाँ सिर्फ 'चेरी के पेड़' की बात कर रहे हैं या फिर उस पेड़ की आड़ में वे किसी की जीवन-गाथा को दिखाने का प्रयत्न कर रहे हैं ? क्या उस 'चेरी के पेड़' जैसी हालत लेखक की बड़ी बहन की नहीं है ? या उन तमाम नारियों (बेटियों) की हालत नहीं है जो उस 'चेरी' की तरह हैं ? जिस घर में खुद उस पेड़ का भी हक नहीं है, जिस घर के अहाते के अंदर वह उगी है। जिस तरह 'चेरी के पेड़' में फलीं लाल-लाल चेरियाँ उस पेड़ की शोभा बढ़ाती है और पक्षियों की चहचहाहट होती है, वैसे ही उन बेटियों की किलकारियाँ होती हैं जो बचपन से उस घर को खुशियों से भर देती हैं। जो घर उन्हें अपने प्यार रूपी खाद-मिट्टी से बड़ा करती हैं, परंतु उस 'चेरी के पेड़' की तरह उस माँ-बाप के घर पर एक दिन उनका कोई हक नहीं रह जाता है। उन्हें 'पराया धन' कहकर अपने जड़ से अलग कर दिया जाता है।

कथाकार की बड़ी बहन को जब से अपनी शादी की बात पता चली थी, तब से वह उदास सी रहने लगी थीं। वह न तो पहले की तरह बच्चों के साथ मिलकर मस्ती करती थीं, न ही पहले की तरह सबसे खुलकर बातें करती थीं। वह एकदम गुमसुम सी और सहमी सी रहने लगी थीं। कथाकार कहते हैं - "दो महीने पूर्व जब से उनकी सगाई हुई, वे बहुत चुप-चुप सी रहने लगी थीं। अगले जाड़ों में उनका विवाह हो जाएगा, उनके विवाह की कल्पना से ही हमारा उत्साह बढ़ जाता। लेकिन विवाह के बाद वे इस घर में नहीं रहेंगी, यह सोचकर दुःख भी होता है।"[4] लेखक की बड़ी बहन को भी यह बात पता थी कि उसमें और उस 'चेरी के पेड़' में कोई अंतर नहीं है। जिस तरह बहुत सारे लोग गाड़ी लेकर आए और भरे-पूरे पेड़ में से 'चेरी' तोड़कर, पल भर में ही एक हरे-भरे पेड़ को खाली करके चले गए, पीछे रह गया सिर्फ टूटे हुए पत्ते और डालियों के साथ ठूंठ पेड़। ठीक उसी तरह एक दिन कथाकार की बड़ी बहन को भी जाना पड़ेगा अपना यह घोंसला छोड़ कर। एक भीड़ आएगी और बहुत सारे शोर-गुल के साथ उन्हें ले जाएगी और पीछे रह जाएगा सिर्फ उनकी टूटी-बिखरी स्मृतियाँ। इस बात का एहसास उनके माँ-बाप को भी था। जिस कारण जब सारे बच्चे 'चेरी के पेड़' को देखकर खुशी से उसमें मगन थे, तब उनके माँ-बाप बेटी की विदाई के लिए चिंता में थे। कथाकार बताते हैं कि -"माँ को बहन के विवाह की चिन्ता लगी हुई थी। जब घर का काम न रहता तो पिता के साथ वे इस विषय पर कितनी ही बातें किया करती थीं। पिता एक कॉपी में माँ की बतलाई हुई सूची बनाते थे - क्या सामान मंगवाना होगा, कितना गहना बनेगा, कितनी साड़ियाँ, बारात कहाँ ठहरेगी ?
इस चर्चा से बहन का चेहरा और भी गंभीर हो जाता।"[5]

यह गाथा सिर्फ लेखक की बड़ी बहन की ही नहीं, बल्कि समाज की समस्त नारियों के जीवन की कहानी है। नारी सब कुछ सहन करने वाली होने के कारण सृष्टि के आरंभ से ही समाज की समस्त पीड़ा एवं दुःख उन्हीं के हिस्से आए हैं। इतिहास के पन्ने पलटने से यह पता चलता है, उदाहरण के तौर पर हम'रामायण' की 'सीता' मैया या 'गौतम बुद्ध' की पत्नी 'यशोधरा' को ही देखें सकते हैं। यदि 'यशोधरा' ठीक बुद्ध की तरह सत्य की तलाश में बिना किसी को बताए रात को निकल जातीं, तो क्या आज वे बुद्ध कहलातीं या कुछ और कहलातीं ? नारियों के बारे में प्रसिद्ध रचनाकार 'शिवमूर्ति' अपने एक साक्षात्कार में बताए हैं कि- "इस सृष्टि की सबसे अच्छी चीज़ वही है...स्त्री... क्योंकि वही सृष्टि कर सकती है। पुरुष चाहे जो बन जाए, माँ कभी नहीं बन सकता।"[6] सिर्फ शिवमूर्ति ही नहीं हिन्दी साहित्य में नारियों के हक के लिए अनेक साहित्यकारों ने स्वर उठाया है। आधुनिक युग में यह एक विमर्श के रूप में सामने आया जिसे 'नारी विमर्श' के नाम से जाना जाता है। 'नारी' की महानता बताते हुए 'संवेद' पत्रिका में 'श्रीराम त्रिपाठी' अपने एक लेख में बताते हैं -" स्त्री के बिना मनुष्य और मनुष्यता की कल्पना भी नहीं की जा सकती। "[7]

जिस घर ने बेटियों को बचपन से पाला-पोसा और उनकी हर ज़रूरत को पूरा किया, परंतु एक दिन उन्हीं बेटियों पर उन माता-पिता का कोई हक़ नहीं रह जाता। ठीक उसी 'चेरी के पेड़' की तरह जिसने अपने अंदर के खाद से लाल-लाल 'चेरी' उगाया, उसे दूसरों से बचाने

के लिए अपनी टहनियों के पत्तों के नीचे छुपाकर रखा, एक दिन उसी 'चेरी' पर उसका कोई हक़ नहीं रह जाता। जिस तरह उस 'चेरी के पेड़' का अपना कोई ठिकाना नहीं रह गया था , वह उगा तो कथावाचक के आँगन में था परंतु वह उनका नहीं था, मालिक उसका कोई और था जो एक दिन उसको देखने भी नहीं आया और वह बूढ़ा आदमी जिसने उस 'चेरी' को रात-दिन बचाता रहा, परंतु वह उसका भी नहीं था। ठीक उसी तरह एक 'नारी' जो बचपन से एक घर में बड़ी होती है परंतु वह घर उसका नहीं होता है। शादी के बाद वह दूसरे घर जाती है परंतु वह घर भी उसका अपना नहीं होता। जिस घर में वह बचपन से पली-बढ़ी, एक दिन वह उसी घर की मेहमान बन जाती है। यह हर एक नारी के जीवन की दास्तान होती है।

कहानी के अंत में यह दिखाया गया है कि उस रात को कथाकार की बड़ी बहन उन खाली पेड़ों को देखकर कुछ सोच रही थी परंतु वह क्या सोच रही होगी ? क्या यह सोच सिर्फ उस रात को लेखक की बड़ी बहन की ही रही होगी या फिर उन तमाम नारियों की रही होगी, जो आज भी इसी सोच में हैं ! किंतु तब से लेकर आज तक हम सिर्फ़ इन बातों पर सोच ही रहे हैं, तब से अब तक कुछ नहीं बदला है। आज के बाद शायद आप लोग भी किसी फलदार पेड़ को देखकर यही सोचेंगे कि वह पेड़ जो अपने फल को इतना सँजोकर रखा है, वह उसका नहीं है। आज के बाद हर एक पेड़ के दर्द को शायद ही कोई समझ पाए और उस नारी को भी !

संदर्भ :

1. https://www.hindwi.org/ebooks/husna-bibi-aur-anya-kahaniyan-ramkumar-ebooks ,pg- 3
2. https://www.share.google/WCApglztPOyWlh6G1
3. साहनी, भीष्म, हिन्दी कहानी संग्रह, साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण, 1988, पृ.139
4. साहनी, भीष्म, हिन्दी कहानी संग्रह, साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण, 1988, पृ. 136
5. साहनी, भीष्म, हिन्दी कहानी संग्रह, साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण, 1988, पृ. 138
6. सिद्धार्थ, सुशील, (सं.), मेरे साक्षात्कार : शिवमूर्ति, किताबघर प्रकाशन, प्रथम संस्करण : 2013,पृ. 114
7. कालजयी, किशन, (सं), संवेद, अंक 2-4, फरवरी-अप्रैल : 2014, पृ. 33